ध्यान दें:

18

कवच कुण्डल का दान

पूर्व पाठ में विषय था कि कर्ण अस्त्रों को प्राप्त करने के लिए परशुराम के पास जाता है। यद्यपि उसने अस्त्र विद्या को प्राप्त किया फिर भी गुरु के श्राप को भी प्राप्त किया। इसलिए यह दु:ख उसके मन में ही है। फिर भी उसके पास में कवच कुण्डल है। इसलिए वह भी अजेय है। किन्तु कर्ण दानवीर है ऐसा भारत के इतिहास में सुप्रसिद्ध है। वह अपने प्राणभय को जानते हुए भी छद्म वेशधारी भिक्षु के लिए कवच कुण्डल दे देता है। कवि कर्ण के मनोभावों को संतुलित शैली में प्रकट करता है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे:

- इन्द्र के छल को जानने में;
- कर्ण की दान में उदारता को जानने में;
- कवि भास के कवित्व का परिचय प्राप्त करने में;
- नाटक में एक अंक का प्रसंग संस्कृत परम्परा में कैसे उत्पन्न हुआ जानने में;
- विभिन्न शब्दों का प्रयोग कर पाने में;
- व्याकरण विषयों को जानने में;
- यहाँ आए शब्दों को जानकर संस्कृत में लिखने में, बोलने में और उन शब्दों को प्रयोग कर सकने में;

18.1) मूल पाठ

(नेपथ्ये)

भो कण्ण! महत्तरं भिक्खं याचेमि। (भो: कर्ण! महत्तरां भिक्षां याचे)।

ध्यान दें:

कर्णः- (आकर्ण्य) अये वीर्यवान् शब्दः।
श्रीमानेष न केवलं द्विजवरो यस्मात् प्रभावो महा-
नकर्ण्य स्वरमस्य धीरनिनदं चित्रार्पितांगा इव।
उत्कर्णास्तिमितांचिताक्षवलितग्रीवार्पिताग्रानना-
स्तिष्ठन्त्यस्ववशांगयष्टि सहसा यान्तो ममैते हयाः॥15॥
आहूयतां स विप्रः।न न। अहमेवाह्वयामि। भगवन्नित इतः।

व्याख्या-

श्लोक अन्वय- एष केवलं द्विजवरः न अपि तु श्रीमान्, यस्मात् महान् प्रभावः, धीरनिनदं स्वरमाकर्ण्य मम एते हयाः उत्कर्णास्तिमितांचिताक्षवलितग्रीवार्पिताग्रानना: अस्ववशांगयष्टि सहसा यान्तः चित्रार्पिता इव तिष्ठन्ति।।15।।

व्याख्या- गम्भीर शब्द को सुनकर यह याचक केवल ब्राह्मणों में श्रेष्ठ नहीं अपितु विशिष्ट शोभा से युक्त है। जिस कारण से उसका महान प्रभाव दिखाई दे रहा है। किसका वह प्रभाव है? जिसके गम्भीर शब्द घोष को सुनकर मेरे चलते हुए घोड़े उत्सुकता से निर्निमेष दृष्टि से गर्दन को टेढ़ी करके उसकी ओर देखते हुए यकायक रूक गए जैसे उनका अपने शरीर पर वश न हो। उनका शरीर चित्र लिखित के समान स्थिर है। याचक के इस प्रभाव से ही मेरे अश्व चित्र के समान निश्चल हुए। शार्दूलविक्रीड़ित छन्द।।15।।

सरलार्थ- इस प्रकार कहकर युद्ध स्थल पर जाने के लिए कर्ण ने शल्य के साथ रथारोहण किया। फिर कर्ण ने शल्य को आदेश दिया। कि जहाँ अर्जुन है वहाँ ही मेरे रथ को ले चलो। उसी समय कर्ण के रास्ते में 'महत्तरां भिक्षां याचे' भिक्षु के द्वारा कहे हुए गम्भीर शब्द को सुनकर कहा- यह कण्ठ स्वर बुद्धिमान और वीर्यवान ब्राह्मण का है, क्योंकि गम्भीर शब्दों को सुनकर मेरे घोड़े उत्सुक होकर सुन्दर नेत्रों से उत्सुकता से निर्निमेष होकर चित्र के समान स्थिर हो गए। उनके अंग अपने वश में नहीं हैं। इस प्रकार कहकर उसने शल्य से कहा जैसे शल्य ब्राह्मण को बुलाता है, परन्तु उसने उसे रोककर स्वयं ही ब्राह्मण को बुलाया।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- आकर्ण्य - आ + कर्ण + क्त्वा ल्यप् प्रत्यय।
- यान्तः - या + षतृ प्रत्यय पुल्लिंग प्रथमा विभक्ति बहुवचन।
- वाच्यान्तरम् - आहूयतां स विप्रः - भवान् तं विप्रम् आह्वयतु।

18.2) मूल पाठ को समझे।

(ततः प्रविशति ब्राह्मणरूपेण शक्रः)
शक्रः- भो मेघाः, सूर्येणैव निवर्त्य गच्छन्तु भवन्तः। (कर्णमुपगम्य)
भो कण्ण! महत्तरं भिक्खं याचेमि। (भोः कर्ण! महत्तरां भिक्षां याचे।)
कर्णः दृढं प्रीतोऽस्मि भगवन्!
यातः कृतार्थगणनामहमद्य लोके

ध्यान दें:

राजेन्द्रमौलिमणिरंजितपादप 9:।
विप्रेन्द्रपादरजसा तु पवित्रमौलि:
कर्णो भवन्तमहमेष नमस्करोमि॥16॥

व्याख्या

श्लोक अन्वय- अद्य लोके राजेन्द्रमौलिमणिरंजितपादपद्म: कृतार्थगणनां यात: तु विप्रेन्द्रपादरजसा पवित्रमौलि: एष: अहम् कर्ण: भवन्तं नमस्करोमि॥16॥

व्याख्या- संसार में अनेक प्रतापी राजाओं के मुकुट मणि से जिसके चरण कमल सुशोभित होते हैं, वह कर्ण आज ब्राह्मण श्रेष्ठ के चरणों की धुलि से पवित्र मस्तक वाला कृतार्थ होकर आपको नमस्कार करता है। वसन्ततिलका छन्द।

सरलार्थ- कर्ण के बुलाने से ब्राह्मणरूपधारी ने मंच पर प्रवेश कर मेघों को लक्ष्य कर कहा की हे मेघ आप सूर्य के साथ ही प्रस्थान करो। फिर उसने कर्ण के पास आकर कहा- हे कर्ण, बहुत बड़ी भिक्षा मांग रहा हूँ। ब्राह्मण को देखकर आनन्दित हुए कर्ण उसके आशीर्वाद के लाभ के लिए उसे नमस्कार करता है और कहता है- राज श्रेष्ठों के मुकुट मणियों से मेरे चरण कमल शोभित होते हैं। संसार में कृतार्थों में से मैं एक ब्राह्मण श्रेष्ठ के चरणों की धूलि से पवित्र मस्तक वाला मैं कर्ण आज आपको नमस्कार करता हूँ।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- उपगम्य - उप + गम् + क्त्वा ल्यप् प्रत्यय।
- पद्म - वा पुंसि पद्मं नलिनमरविन्दं महोत्पलम्। सहस्रपत्रं कमलं शतपत्रं कुशेशयम। इति।
- रज: - रेणुर्द्वयो: स्त्रियां धुलि: पांसुर्ना न द्वयो रज: इति।

18.3) मूल पाठ

शक्र:- (आत्मगतम्) किं नु खलु मया वक्तव्यं, यदि दीर्घायुर्भवेति वक्ष्ये दीर्घायुर्भविष्यति। यदि न वक्ष्ये मूढ़ इति मां परिभवति। तस्मादुभयं परिहृत्य किं नु खलु वक्ष्यामि। भवतु दृष्टम्। (प्रकाशम्) भो कण्ण! सुय्ये विअ, चन्दे विअ, हिमवन्ते विअ, सागले विअ, चिट्ठदु दे जसो। (भो कर्ण! सूर्य इव, चन्द्र इव, हिमवान् इव, सागर इव तिष्ठतु ते यश:।)

कर्ण:- भगवन्! किं न वक्तव्यं दीर्घायुर्भवेति। अथवा एतदेव शोभनम्। कुत:-

धर्मो हि यत्नै: पुरुषेण साध्यो
भुजंगजिह्वाचपला नृपाश्रिय:।
तस्मात् प्रजापालनमात्रबुद्धया
हतेषु देहेषु गुणा धरन्ते॥17॥
भगवन् किमिच्छसि। किमहं ददामि।

व्याख्या- मनुष्यों में केवल धर्म ही शास्त्रोक्त विधि निषेध आदि प्रयत्न से साध्य है। राजाओं की राजलक्ष्मी सर्प की जिह्वा के समान चंचल है, इसलिए शरीर के नाश होने पर भी बुद्धि से प्रजा का

पाठ-18

कवच कुण्डल का दान

ध्यान दें:

संरक्षण करने से उसके गुण दया, दक्षिणा आदि रहते हैं। उपजाति छन्द।।17।।

श्लोक अन्वय- हि पुरुषेण धर्मः यत्नैः साध्यः, नृपश्रियः भुजंगजिह्वाचपलाः, तस्मात् देहेषु नष्टेषु प्रजापालनमात्रबुद्ध्या गुणाः धरन्ते।।17।।

व्याख्या-

सरलार्थ- कर्ण के वचनों को सुनकर इन्द्र ने आत्मगत रूप से कहा कि यदि आशीर्वाद रूप में दीर्घायु हो ऐसा कहूंगा तब वह दीर्घायु होगा। किन्तु नहीं कहूंगा तो मूर्ख है ऐसा विचार कर मेरा उपहास करेगा। इसलिए दोनों को ही छोड़ देना चाहिए। फिर वह प्रकाश में कहता है - हे कर्ण सूर्य के समान, चन्द्र के समान, पर्वत के समान, सागर के समान आपका यश चिरकाल तक रहे। साधारणतया आशीर्वाद रूप में सब दीर्घायु की प्रार्थना करते हैं, किन्तु इस ब्राह्मण ने वैसा नहीं कहा। इसलिए यह सुनकर कर्ण ने कहा- हे ब्राह्मण दीर्घायु हो ऐसा क्यों नहीं कहा? अथवा दीर्घायु की अपेक्षा यह आशीर्वाद ही सुन्दर है। किसलिए- धर्म को परम यत्न से उद्योग से करना चाहिए, धन लक्ष्मी सर्प की जिह्वा के समान चंचल है, इसलिए प्रजापालन के लिए केवल बुद्धि से कार्य का सम्पादन करना चाहिए। शरीर के नष्ट होने के बाद गुण ही रहते हैं, अर्थात् गुणों से ही मनुष्य दीर्घ जीवी होता है, न कि अर्थ से अथवा न ही शरीर का आश्रय लेकर दीर्घकाल तक जीवित रहते हैं। फिर उस ब्राह्मण से कर्ण ने पूछा क्या चाहते हैं।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- यशः - यशः कीर्ति समज्ञा च इति।
- भुजंगः - सर्पः पृदाकुर्भुजगो भुजंगोऽहिर्भुजंगमः।।
- वाच्यान्तरम् - धर्मः हि यत्नैः पुरुषेण साध्यः।

पाठगत प्रश्न-1

1. ब्राह्मण रूपी इन्द्र ने कर्ण के लिए क्या आशीर्वाद दिया?
2. इन्द्र किस रूप का आश्रय लेकर कर्ण के समीप आया?
3. कर्ण इन्द्र से किस आशीर्वाद की इच्छा करता है?
4. हुतं च दत्तं च तथैव तिष्ठति यह किसकी उक्ति है?
5. भुजंगजिह्वाचपलाः नृपश्रियः वाक्य का क्या अर्थ है?

18.4) मूल पाठ

शक्रः - महत्तरं भिक्खं याचेमि। (महत्तरां भिक्षां याचे।)
कर्णः - महत्तरां भिक्षां भवते प्रदास्ये। श्रूयन्तां मद्विभवाः।
गुणवदमृतकल्पक्षीरधाराभिवर्षि
द्विजवर रुचितं ते तृप्तवत्सानुयात्रम्।
तरुणमधिकमर्थिप्रार्थनीयं पवित्रं
विहितकनकशृंग गोसहस्रं ददामि।।18।।

ध्यान दें:

व्याख्या-

श्लोक अन्वय- हे द्विजवर, अहम् गुणवदमृतकल्पक्षीरधारभिवर्षि, तृप्तवत्सानुपात्रं तरुणम् अधिकम् आर्थिप्रार्थनीयं विहितकनकश्रृंगं पवित्रं रुचितं गोसहस्रं ते ददामि।।18।।

व्याख्या- हे ब्राह्मण श्रेष्ठ, मैं कर्ण अद्भुत गुणों से युक्त, अमृत तुल्य दूध की धारा को बहाने वाली, सन्तुष्ट बछड़ों के साथ, तरुणी युवति, विशेष, याचकों के प्रार्थना योग्य, स्वर्ण से मण्डित सींगों वाली, यज्ञों के लिए पवित्र, सुन्दर हजारों गाएँ तुमको समर्पित करता हूँ। मालिनी छन्द।।

सरलार्थ- बहुत बड़ी भिक्षा चाहता हूँ ऐसे ब्राह्मण वचन को सुनकर उसकी याचना के संकोच को दूर करने के लिए अपने वैभव को कर्ण ने प्रकट किया। कर्ण कहता है- आपको हजार गायें दे सकता हूँ। कैसी गाय तो गुणों से युक्त अमृत के समान दूध की धारा की वर्षा करती हैं, उनके दूध से वत्स प्रसन्न होते है, और लोक यात्रा का निर्वाह भी सम्भव होता है। वो स्वस्थ, सभी धन धान्यों के साथ और जिनके सींग स्वर्ण से अलंकृत हैं।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- प्रदास्ये - प्र + दा + लृट् प्रथम पुरुष एकवचन।
- पवित्रम् - पूतं पवित्रं मेध्यं च वीध्रं तुं विमलार्थकम् इति।
- वाच्यान्तरम् - महत्तरां भिक्षां याचे।

18.5) मूल पाठ

शक्रः - गोसहस्सं त्ति। मुहुत्तअं खिरं पिबामि। णेच्छामि कण्ण! णेच्छामि। (गोसहस्रमिति। मुहूर्तकं क्षीरं पिबामि। नेच्छामि कर्ण! नेच्छामि)।

कर्णः - किं नेच्छसि भवान् इदमपि श्रूयताम्।

रवितुरगसमानं साधनं राजलक्ष्म्या
सकलनृपतिमान्यं मान्यकाम्बोजजातम्।
सुगुणमनिलवेगं युद्धदृष्टापदानं
सपदि बहुसहस्रं वाजिनां ते ददामि।।19।।

व्याख्या

श्लोक अन्वय- रवितुरगसमानं राजलक्ष्म्याः साधनं सकलनृपतिमान्यं मान्यकाम्बोजजातम् सुगुणम् अनिलवेगं युद्धदृष्टापदानं वाजिनां बहु सहस्रं सपदि ते ददामि।।19।।

व्याख्या- सूर्य के घोड़ों के समान, राज लक्ष्मी के साधन भूत, सभी राजाओं के द्वारा प्रशंसित, काम्बोज देश में उत्पन्न, अद्भुत गुणों से युक्त, आग के समान तीव्र वेग वाले, युद्धों में जिनका पराक्रम देखा गया है ऐसे पराक्रमी घोड़े हजारों की संख्या में तुमको अर्पित करता हूँ। मालिनी छन्द।।19।।

सरलार्थ- कर्ण के द्वारा देने के लिए इच्छित हजार गायों को वह ब्राह्मण नहीं चाहता है। वह कहता है कि हजार गायों को आप देने की इच्छा रखते हैं उससे केवल कुछ समय तक दूध पिऊँगा। इसलिए वह नहीं चाहिए। तब कर्ण बहुत सारे घोड़ों को देने की इच्छा करता हुए कहता है- सूर्य के घोड़ों के

ध्यान दें:

समान, राजलक्ष्मी के साधनभूत, सभी राजाओं से प्रशंसित, काम्बोज कुल में उत्पन्न, अद्भुत गुणों से युक्त, वायु के समान वेगवान, युद्ध में पराक्रमी हजारों अश्वों को अब ही देता हूँ।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- क्षीरम् - दुग्धं क्षीरं पयः समम् इति।
- अनिलः - श्वसनः स्पर्शनो वायुर्मातरिश्वा सदागतिः। पृषदश्वो गन्धवहो गन्धवाहानिलाशुगाः इति।

18.6) मूल पाठ

शक्रः - अश्व इति। मुहूर्तकम् आलुभामि। नेच्छामि कर्ण, नेच्छामि।
कर्णः - किं नेच्छति भगवान्। अन्यदपि श्रूयताम्!
मदसरितकपोलं षट्पदैः सेव्यमानं
गिरिवरनिचयाभं मेघगम्भीरघोषम्।
सितनखदशनानां वारणानामनेकं
रिपुसमरविमर्दं वृन्दमेतद्ददामि॥20॥

व्याख्या

श्लोक अन्वय- मदसरितकपोलं षट्पदैः सेव्यमानं गिरिवरनिचयाभं मेघगम्भीरघोषं सितनखदशनानां वारणानां रिपुसमरविमर्दम् एतद् अनेकं वृन्दं ते ददामि।

व्याख्या- मद से सिक्त कपोल जिस पर भ्रमर निरन्तर मंडरा रहे हैं, पर्वतों के समान जिसकी आभा अर्थात् कान्ति है। मेघ के समान गम्भीर शब्द है जिसका, श्वेत वर्ण वाले नाखून एवं दांत है जिसके, युद्ध में जो शत्रुओं के विनाशकारक हैं, ऐसे बहुत से हाथियों के समूह का दान करता हूँ। मालिनी छन्द॥20॥

सरलार्थ- ब्राह्मण हजारों अश्वों को भी स्वीकार नहीं करता है। वह कहता है। कुछ समय तक ही अश्वारोहण करूंगा। अतः वह नहीं चाहता। तब कर्ण हाथियों के समूह को देने की इच्छा करते हुए कहता है- जिनका गण्डस्थल मद से सिक्त है, मद की गन्ध से भ्रमर मंडराते हैं, पर्वतों के समान जिनकी शोभा है, जिनका गर्जन गम्भीर मेघ के समान है जिनके नाखून और दांत श्वेत वर्ण के है और जो युद्ध में शत्रुओं का नाश करते हैं, उस जैसे बहुत से हाथियों को देता हूँ।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- सेव्यमानः - सेव् + ल्यप् + षानच् पु. प्रथमा विभक्ति एकवचन।
- षट्पदः - द्विरेफपुष्पलिंगभृंगषट्पदभ्रमरालयः। इति।
- मेघः - अभ्रं मेघो वारिवाहः स्तनयित्नुर्बलाहकः। धाराधरो जलधरस्तडित्वान्वारिदोऽम्बुभृत्। इति।

ध्यान दें:

18.7) मूल पाठ

शक्रः- गअ त्ति। मुहुत्तअं आलुहामि णेच्छामि कण्ण! णेच्छामि। (गज इति। मुहूर्तकम् आलुभामि नेच्छामि कर्ण नेच्छामि।)

कर्णः- किं नेच्छति भवान्। अन्यदपि श्रूयताम्। अपर्याप्तं कनकं ददामि।

शक्रः- गहिणअ गच्छामि। (किंचिद् गत्वा।) गृहीत्वा गच्छामि। नेच्छामि कर्ण! नेच्छामि।

कर्णः- तेन हि जित्वा पृथिवीं ददामि।

शक्रः- पुहुवीए किं करिस्सम्। (पृथिव्या किं करिष्यामि।)

कर्णः- तेन ह्यग्निष्टोमफलं ददामि।

शक्रः- अग्निट्ठोमफलेन किं कय्य। (अग्निष्टोमफलेन किं कार्यम्।)

कर्णः- तेण हि मच्छिरो ददामि। (तेन हि मच्छिरो ददामि।)

शक्रः- अविहा अविहा। अविहा अविहा!

कर्णः- न भेतव्यं न भेतव्यम्। प्रसीदतु भवान्। अन्यदपि श्रूयताम्।

अंगैः सहैव जनितं मम देहरक्षा
देवासुरैरपि न भेद्यमिदं सहस्रैः।
देयं तथापि कवचं सहकुण्डलाभ्यां
प्रीत्या मया भगवते रुचितं यदि स्यात्॥21॥

व्याख्या-

श्लोक अन्वय- अंगै सह एव जनितं मम देहरक्षा सहस्त्रैः देवासुरैः अपि यन्न भेद्यं तथापि कुण्डलाभ्यां सह इदं कवचं यदि भगवते रुचितं स्यात् तर्हि मया प्रीत्या देयम्।

व्याख्या- शरीर के अंगों के साथ उत्पन्न हुए मेरे शरीर की रक्षा के लिए हजारों शस्त्रधारी देव दानव भी जिनको भेदने के योग्य नहीं है फिर भी वह कवच कुण्डल यदि ब्राह्मण आप की अभिलाषा हो तो मैं कर्ण सहर्ष देता हूँ । यद्यपि इस कवच से मेरे अंगों की रक्षा होती है, फिर भी यदि यह आपको अभीष्ट हो तो उसे भी देता हूँ। वसन्ततिलका छन्द।।21।।

सरलार्थ- कर्ण की हाथियों को देने की इच्छा है ऐसा सुनकर याचक कहता है- हाथी पर कुछ समय तक ही आरोहण करूंगा। इसलिए वह नहीं चाहता। तब कर्ण कहता है- इच्छानुसार स्वर्ण देता हूँ। इसे सुनकर स्वर्ण ग्रहण करके चला जाऊंगा ऐसा कहते हुए भी कुछ जाकर याचक फिर से कहता है- स्वर्ण को नहीं चाहता। तब कर्ण ने कहा- जीतकर भूमि को देता हूँ। याचक कहता है- पृथ्वी का क्या करूंगा। पृथ्वी का प्रयोजन नहीं है। तब कर्ण बोलता है- अग्निष्टोम नामक यज्ञ स्वर्गफल देता है वेद विद्वानों को अवश्य ही करना चाहिए। उसके फल को देना चाहता हूँ। इन्द्र कहता है- मेरा अग्निष्टोम से प्रयोजन नहीं है। तब कर्ण कहता है- फिर मेरे सिर को देता हूँ। अर्थात् मेरे प्राणों को ग्रहण करो। तब इन्द्र अनर्थ-अनर्थ ऐसा कहता है। उसे सुनकर डरिए नहीं डरिए नहीं कर्ण सान्तवना देता है। दिए जाने पर और ब्राह्मण के बार-बार मना करने पर ब्राह्मण को देखकर उसके अभिलाषित कवच कुण्डल देने के लिए कर्ण ने जाना। मेरे शरीर की रक्षा के लिए कुण्डलों के साथ कवच मेरे जन्म से ही विद्यमान

ध्यान दें:

है, और यह कवच सहस्त्रों देवों और असुरों द्वारा भेदने योग्य नहीं है। यदि आपकी इच्छा हो तो कवच कुण्डल भी दे दूंगा।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- श्रूयताम् - श्रु + य + लोट् लकार प्रथम पुरुष एकवचन।
- भेतव्यम् - भी + तव्य प्रत्यय
- कनकम् - स्वर्णं सुवर्णं कनकं हिरण्यं हेम हाटकम् इति।

पाठगत प्रश्न-2

6. कर्ण ने कितनी गायें देने के लिए कहा?
7. कर्ण ने कितने घोड़े के दान को कहा?
8. कर्ण ने किसके समूह को देने ही इच्छा की?
9. कर्ण कितने स्वर्ण को देना चाहते है?
10. कर्ण किस प्रकार की पृथ्वी को देना चाहते है?

18.8) मूल पाठ

शक्रः- (सहर्षम्) ददातु ददातु।

कर्णः- (आत्मगतम्) एष एवास्य कामः। किं नु खल्वनेककपटबुद्धेः कृष्णस्योपायः सोऽपि भवतु। धिगयुक्तमनुषोचितम्। नास्ति संशयः (प्रकाशम्) गृह्यताम्।

शल्यः- अंगराज! न दातव्यं न दातव्यम्।

कर्णः- शल्यराज! अलमलं वारयितुम्। पष्य

शिक्षा क्षयं गच्छति कालपर्ययात्
सुबद्धमूला निपतन्ति पादपाः ।
जलं जलस्थानगतं च शुष्यति
हुतं च दत्तं च तथैव तिष्ठति॥22॥
तस्माद् गृह्यताम् (निकृत्य ददाति।)

व्याख्या-

श्लोक अन्वय- काल पर्ययात् शिक्षा क्षयं गच्छति सुबुद्धमूलाः पादपाः निपतन्ति। जलस्थानगतं जलं शुष्यति च। किन्तु हुत्तं च दत्तं च तथैव तिष्ठति।।22।।

व्याख्या- बहुत चतुर बुद्धि वाले कृष्ण का ही यह प्रयोजन है। रूकने का कोई प्रयोजन नहीं। मत रोको।

ध्यान दें:

समय के बीत जाने पर शिक्षा नाश को प्राप्त करती है। दृढ़ मूल वाले वृक्ष भी भूमि पर गिर जाते हैं। जलाशय में गया जल भी सूख जाता है। किन्तु जो हवनादि अग्नि में दिया गया एवं दान है वह उचित समय पर सत्पात्र को प्राप्त होता है। वैसे ही अविनाशी रूप में रहता है। अतः हवनादि और दान में दी गई सभी वस्तुओं के द्वारा प्रशस्ति होती है।

सरलार्थ- कवच कुण्डल का नाम सुनने से इन्द्र ने हर्ष से कहा- दे दो, दे दो। तब कर्ण मन में कहता है की- यह कवच कुण्डल को ही स्वीकार करने की इच्छा करता है। कपट बुद्धि कृष्ण का ही यह कार्य है। दे दूंगा ऐसा मेरे द्वारा इस विषय में शोक नहीं करना चाहिए। इस प्रकार मन में विचारकर- लीजिए कर्ण ने कहा। शल्यराज उसे रोकते हैं। किन्तु वह कर्ण कहता है- समय बीतने पर शिक्षा नष्ट हो जाती है, मजबूत जड़ वाले वृक्ष भी गिर जाते हैं, जलाशय में गया जल भी समय आने पर सूख जाता है, किन्तु दान और यज्ञ में आहूत सभी ज्यों के त्यों बिना नाश हुए रहता है। फिर कर्ण ने कवच कुण्डल को उतारकर इन्द्र के लिए दे दिए।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- निकृत्य - नि + कृत् + क्त्वा ल्यप् प्रत्यय।
- दातव्यम् - दा + तव्य प्रत्यय।
- निपतन्ति - नि + पत् + लट् लकार, प्रथम पुरुष, बहुवचन।
- पादपः - वृक्षो महीरुहः शाखी विटपी पादपस्तरुः इति।

18.9) मूल पाठ

शक्रः- (गृहीत्वा आत्मगतम्) हन्त गृहीते एते। पूर्वमेवाहमर्जुनविजयार्थं सर्वदेवैर्यत् समर्थितं तदिदानीं मयानुष्ठितम्। तस्मादहमप्यैरावतमारुह्यार्जुनकर्णयोर्द्वन्द्वयुद्धं पष्यामि।

(निष्क्रान्तः।)

शल्यः- भो अंगराज! वंचितः खलु भवान्।

कर्णः- केन?

शल्यः- शक्रेण।

कर्णः- न खलु। शक्रः खलु मया वंचितः। कुतः,

अनेकयज्ञाहुतितर्पितो द्विजैः
किरीटवान् दानवसंघमर्दनः।
सुरद्विपस्फालनकर्कशांगुलि-
र्मया कृतार्थः खलु पाकशासनः॥23॥

व्याख्या

श्लोक अन्वय- द्विजैः अनेकयज्ञाहुतितर्पितः किरीटवान् दानवसंघमर्दनः सुरद्विपास्फालनकर्कशांगुलिः पाकशासनः मया कृतार्थः खलु॥23॥

पाठ-18

कवच कुण्डल का दान

ध्यान दें:

व्याख्या- अनेक ब्राह्मणों के द्वारा यज्ञ में दी गई आहुति से तृप्त होता है, मुकुट धारण कर दानव के समूह का नाष करता है। ऐरावत के संचालन से जिसकी अंगुली कठोर हो गई है वह इन्द्र मेरे द्वारा उसके सफल मनोरथों को सम्पादित किया गया है। ब्राह्मणों के अनेक यज्ञ हवियों से जो प्रसन्न होता है वह इन्द्र याचना करने वाला मेरे द्वारा पूर्ण मनोरथ वाला हुआ। वंशस्थ छन्द।।23

सरल अर्थ- कवच कुण्डल को ग्रहण कर इन्द्र ने अपने मन में कहा कि पहले ही अर्जुन की विजय के लिए सभी देवों से जो प्रतिज्ञा की अब मेरे द्वारा वह कार्य हो गया। इसलिए मैं अर्जुन और कर्ण के युद्ध को ऐरावत् से देखता हूँ। इस प्रकार कहकर इन्द्र निकल गया। शल्य तब कर्ण से कहता है कि इन्द्र ने आपको ठग लिया। तब कर्ण कहता है- मैं इन्द्र के द्वारा नहीं अपितु इन्द्र मेरे द्वारा ठगा गया है। किस प्रकार- जो यज्ञ में बहुत से ब्राह्मणों के द्वारा आहूति दिए जाने से तृप्त है, जो मुकुट को धारण किए दानवों को मारता हैं, ऐरावत के संचालन से जिसकी अंगुलियाँ कठोर हो गई, वह इन्द्र निश्चय ही आज कर्ण के द्वारा उपकृत है। इसलिए इन्द्र ही कर्ण से ठगा गया है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- गृहीत्वा - ग्रह + क्त्वा प्रत्यय।
- यज्ञः - यज्ञः सवोऽध्वरो यागः सप्ततन्तुर्मखः क्रतुः इति।

18.10) मूल पाठ

(प्रविष्य ब्राह्मणरूपेण)

देवदूतः- भोः कर्ण! कवचकुण्डलग्रहणाज्जनितपश्चात्तापेन पुरन्दरेणानुगृहीतोऽसि। पाण्डवेष्वेकपुरुषवधार्थममोघमस्त्रं विमला नाम शक्तिरियं प्रतिगृह्यताम्।

कर्णः- धिग्, दत्तस्य न प्रतिगृह्णामि।

देवदूतः- ननु ब्राह्मणवचनाद् गृह्यताम्।

कर्णः- ब्राह्मणवचनमिति। न मयातिक्रान्तपूर्वम्। कदा लभेय।

देवदूतः- यदा स्मरसि तदा लभस्व।

कर्णः- बाढम्। अनुगृहीतोऽस्मि। प्रतिनिवर्ततां भवान्।

देवदूतः- बाढम्। (निष्क्रान्तः।)

कर्णः- शल्यराज! यावद्रथमारोहावः।

शल्यः- बाढम्। (रथारोहणं नाटयतः।)

कर्णः- अये! शब्द इव श्रूयते। किं नु खल्विदम्।

शंखध्वनिः प्रलयसागरघोषतुल्यः
कृष्णस्य वा न तु भवेत् स तु फाल्गुनस्य।
नूनं युधिष्ठिरपराजयकोपितात्मा

ध्यान दें:

पार्थः करिष्यति यथाबलमद्य युद्धम्।।24।।
शल्यराज! यत्रासावर्जुनस्तत्रैव चोद्यतां मम रथः।

शल्यः - बाढम्।

व्याख्या-

श्लोक अन्वय- प्रलयसागरघोषतुल्यः शंखध्वनिः कृष्णस्य वा न तु भवेत् स तु फाल्गुनस्य भवेत्। युधिष्ठिरपराजयकोपितात्मा पार्थः अद्य यथाबलं युद्धं करिष्यति इति नूनम्।।24।।

व्याख्या- कवच और कुण्डल को ग्रहण करने से उत्पन्न पश्चात्ताप से इन्द्र कर्ण के पास प्रतिग्रहण की इच्छा से गया।

प्रलयसागर के घोष के समान वह ध्वनि वासुदेव की अर्थात् कृष्ण की होगी और किसी के नहीं। वह ध्वनि तो अर्जुन की ही होने योग्य है। धर्मराज युधिष्ठिर की पराजय से क्रोधित होकर वह अर्जुन आज युद्ध में यथा बल का प्रयोग करके युद्ध को करेगा। वसन्ततिलका छन्द।।24।।

सरलार्थ- उस समय में कोई देवदूत ने ब्राह्मणरूप में प्रवेश कर सूचित किया कि कवच कुण्डल को लेने से पश्चात्ताप के लिए इन्द्र ने कर्ण को पाण्डवों में से किसी एक को मारने हेतु विमला नामक शक्ति को दिया। किन्तु कर्ण दिए हुए के बदले दान को स्वीकार नहीं करता। किन्तु ब्राह्मण के वचनों का उसने पहले प्रतिकार नहीं किया इस कारण से देवदूत से बोधित होकर वह पुनः शक्ति को स्वीकार करता है। और फिर पूछता है कि कब यह शक्ति प्राप्त होगी। देवदूत कहता है जब स्मरण करोगे तब प्राप्त होगी। इस प्रकार बताकर देवदूत प्रस्थान करता है। शल्यराज कर्ण के साथ रथ पर चढ़ते हैं। उसी समय शंखध्वनि को सुनकर कर्ण कहता है कृष्ण तथा अर्जुन की तेज शंख ध्वनि को सुनो। मेरे द्वारा युधिष्ठिर की पराजय को सुनकर अर्जुन सम्पूर्ण बल से युद्ध को करेगा। इसलिए जहाँ अर्जुन का रथ है वहाँ ही मेरे रथ को ले चलो। कर्ण का आदेश सुनकर शल्यराज ने वैसा ही किया।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- प्रतिनिवर्तताम् - प्रति + नि + वृत् + लोट् लकार प्रथम पुरुष एकवचन।
- ध्वनिः - शब्दे निनादनिनदध्वनिध्वानरवस्वनाः इति।
- सागरः - समुद्रोऽब्धिरकूपारः पारावारः सरित्पतिः। उदन्वानुदधिः सिन्धुः सरस्वान्सागरोऽर्णवः इति।

18.11) मूल पाठ

(भरतवाक्य)

सर्वत्र सम्पदः सन्तु नश्यन्तु विपदः सदा।
राजा राजगुणोपेतो भूमिमेकः प्रशास्तु नः ।।25।।

(निष्क्रान्तौ)

इति कर्णभारं समाप्तम्।

व्याख्या

यलोक अन्वय- सर्वत्र सम्पद: सन्तु सदा विपद: नश्यन्तु, राजगुणोपेत: एक: राजा न: भूमिं प्रशास्तु।।25।।

व्याख्या- सारे जगत में सम्पत्तियाँ हो। विपत्तियों का सदा नाश हो जाए, राज लक्षणों से युक्त एक राजा इस भूमि पर उचित रूप से शासन करें।

सरलार्थ- अब भरत वाक्य से नाटक की समाप्ति होती है। संसार में सब जगह सम्पदा हो, विपत्तियों का सदैव नाश हो, राज गुणों से सम्पन्न कोई राजा पृथ्वी पर शासन करें

ध्यान दें:

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- प्रशास्तु - प्र + शास् + लोट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन।
- सम्पद् - अथ सम्पदि। सम्पत्ति: श्रीश्च लक्ष्मीश्च इति।
- भूमि: - भूभूमिरचलानन्ता रसा विश्वम्भरा स्थिरा। धरा धरित्री धरणि: क्षोणिर्ज्या काष्यपी क्षिति:। सर्वंसहा वसुमति: वसुधोर्वी वसुन्धरा । गोत्रा कु: पृथिवी पृथ्वीक्ष्माऽवनिर्मेदिनी मही। इति।

पाठगत प्रश्न-3

11. कवच कुण्डल के दान से अर्जुन किसके द्वारा रोका गया?
12. समय बीतने पर क्या नष्ट हो जाता है?
13. क्या चिरकाल तक रहता है कर्ण कहता है?
14. देवदूत ने इन्द्र के अनुग्रह से कर्ण को क्या शक्ति दी?
15. देवदूत किसके द्वारा भेजा गया?
16. फाल्गुन कौन है?

18.12) इस नाटक में प्रयुक्त छन्दों के लक्षण-

1. अनुष्टुप् - श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं सर्वत्र लघु पंचमम्।

   द्विचतुष्पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययो:।
2. उपजाति - अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ता:।
3. शार्दूलविक्रीडित - सूर्याश्वैर्मसजस्तता: सुगरव: शार्दूलविक्रीडितम्।
4. मालिनी- ननमययुतेयं मालिनी भोगिलोकै:।
5. वसन्ततिलका - उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ ग:।
6. प्रहर्षणी - त्र्याशाभिर्मनजरगा प्रहर्षणीयम्।
7. वंशस्थ - जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ।

पाठ-18

कवच कुण्डल का दान

ध्यान दें:

पाठ सार

कर्ण ने रथ पर आरूढ़ होकर अर्जुन के समीप अपने रथ को ले चलो ऐसा शल्यराज को निर्देश दिया। तब नेपथ्य में 'महत्तरां भिक्षां याचे' किसी के स्वर को सुनकर कर्ण ने कहा कि यह स्वर वीर्यवान ब्राह्मण का है। क्योंकि गम्भीर शब्द को सुनकर घोड़े चित्र के समान स्थिर हो गए। फिर उसने ब्राह्मण को बुलाया।

तब ब्राह्मणरूपधारी इन्द्र प्रवेश करता है। इन्द्र कहता है- हे कर्ण बड़ी भिक्षा चाहता हूँ। तब कर्ण उसके आशीर्वाद प्राप्ति के लिए उसको नमस्कार करता है। इन्द्र मन में विचार करता है कि यदि दीर्घायु हो कहता हूँ तो कर्ण दीर्घायु होगा, यदि उसे नहीं कहता तो मूर्ख है ऐसा सोचेगा, इसलिए कुछ नहीं कह सकता। प्रकाश में कहता है कि हे कर्ण सूर्य के समान, चन्द्रमा के समान, पर्वतों के समान, सागरों के समान तुम्हारा यश रहे। यह सुनकर कर्ण कहता है कि हे भगवन् आपने दीर्घायु हो ऐसा क्यों नहीं कहा? अथवा मेरे लिए यह ही ज्यादा अच्छा है, क्योंकि केवल धर्म का ही मनुष्यों के द्वारा यत्न से पालन करना चाहिए। राजलक्ष्मी तो सर्प की जिह्वा के समान चंचल होती है। इसलिए प्रजा का पालन केवल बुद्धि से हो क्योंकि शरीर नष्ट होने पर भी गुण स्थिर रहते हैं। कहो भगवन् क्या इच्छा है मैं क्या दूँ। यह सुनकर इन्द्र कहता है कि बड़ी भिक्षा चाहता हूँ। कर्ण ने कहा- बड़ी भिक्षा ही आपको देता हूँ। क्या आप सहस्रों गायें चाहते हैं। इन्द्र उसे नहीं चाहता। फिर कहता है- काम्बोज कुल में उत्पन्न अनेक सहस्र अश्वों को चाहते हैं? अथवा बहुत से हाथियों की इच्छा है? क्या अपर्याप्त स्वर्ण को चाहते हो? अथवा क्या पृथ्वी को चाहते हो? क्या अग्निष्टोम के फल की इच्छा करते हो। इन्द्र इनमें से किसी को भी नहीं चाहता। इसलिए कर्ण कहता है कि क्या आप मेरा सिर चाहते हैं। इन्द्र उसे भी नहीं चाहता। तब क्या आप सहस्त्रों देव और असुर के द्वारा अभेद्य कवच को कुण्डलों के साथ चाहते हो? ऐसा कर्ण ने पूछा। तब इन्द्र ने हर्ष से कहा दे दो दे दो। यह कृष्ण का कूट कार्य है ऐसा जानकर भी कर्ण ने शल्यराज के निषेध को न सुनकर इन्द्र को कवच कुण्डल दे दिए। और कहा- समय बीतने पर शिक्षा का भी नाश हो जाता है, वृक्ष भी समय से गिर जाते है, जलाशयों का जल भी सूख जाता है, किन्तु यज्ञ में आहुत किए और दान का कभी भी विनाश नहीं होता। वह सदैव उसी प्रकार रहता है। इन्द्र ने उसे ग्रहण कर हर्ष से प्रस्थान किया। शल्यराज ने कहा- आप निश्चय ही इन्द्र के द्वारा ठगे गए हैं। कर्ण ने कहा कि इन्द्र ही उससे ठगा गया है। कहाँ से? जो यज्ञ में आहुति प्रदान से बहुत से ब्राह्मणों द्वारा तृप्त होता है, मुकुटधारण कर जो दानवों को मारता हैं, वह इन्द्र निश्चय ही आज कर्ण से उपकृत है।

उस समय देवदूत ने वहाँ आकर निवेदन किया कि कवच कुण्डल के ग्रहण करने के पश्चात्ताप से इन्द्र ने कर्ण के लिए पाण्डवों में से किसी एक को मारने की विमला नामक शक्ति प्रदान की है। परन्तु कर्ण दिए हुए के प्रतिग्रहण को स्वीकार नहीं करता है। किन्तु ब्राह्मण वचनों का उसने पहले कभी प्रतिकार नहीं किया इस कारण से देवदूत से बोधित होकर उसने शक्ति को स्वीकार किया। और उससे पूछता है कि शक्ति कब प्राप्त होती है। देवदूत कहता है जब स्मरण करोगे तब प्राप्त होती है। ऐसा कहकर देवदूत प्रस्थान करता है। शल्यराज कर्ण के साथ रथ पर चढ़ते हैं। उसी समय शंखध्वनि को सुनकर कर्ण कहता है कृष्ण अथवा अर्जुन की शंख ध्वनि सुनाई दे रही है। युधिष्ठिर की पराजय को सुनकर अर्जुन यथाबल से युद्ध को करेगा। इसलिए जहाँ अर्जुन का रथ है वहाँ ही मेरे रथ को ले चलो। शल्यराज वैसा ही करते हैं। तब भरत वाक्य को सुनते हैं- संसार में सब जगह सम्पदा हो, विपत्तियों का नाश हो। राजगुणों

पाठ-18

कवच कुण्डल का दान

ध्यान दें:

से सम्पन्न राजा पृथ्वी पर शासन करें। फिर कर्ण और शल्य निकल जाते हैं। नाटक समाप्त हो जाता है।

आपने क्या सीखा

- कर्ण की दानवीरता
- इन्द्र के छल
- महाकवि मास के कवित्व को,
- भारवि विरचित किराताजुर्नीयम का परिचय

पाठान्त प्रश्न

1. कर्ण किसके द्वारा पाण्डवों की मृत्यु करने से रोका गया?
2. कवच कुण्डल के प्रतिदान रूप में इन्द्र ने कर्ण को क्या दिया?
3. कर्ण ब्राह्मण के लिए क्या-क्या देना चाहता था।
4. ''हुतं च दत्तं तथैव तिष्ठति''- कर्ण के इस वाक्य को विस्तारित करो।
5. कर्ण के कवच कुण्डल दान को संक्षेप में लिखिए।
6. वस्तुत: इन्द्र ही कर्ण के द्वारा ठगा गया यहाँ कर्ण की क्या उक्ति है
7. क्या विचारकर कर्ण कवच कुण्डल देता है।
8. संक्षेप में नाटककार का परिचय बताए।
9. कवच कुण्डल किस प्रकार के है कर्ण कहता है।
10. स्तम्भ में स्थित शब्दों का किसके साथ सम्बन्ध है रेखा जोड़कर प्रदर्शित करें।

1.	कर्ण:	धनंजय:
2.	शल्य:	नागकेतु:
3.	दुर्योधन:	जामदग्न्य:
4.	अर्जुन:	पुरन्दर:
5.	परशुराम:	दुर्योधन:
6.	नागकेतु:	सारथि:
7.	शक्र:	अंगेश्वर:

ध्यान दें:

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

उत्तर-1

1. सूर्य, चन्द्र, पर्वत, सागरों के समान तुम्हारा यश रहें।
2. ब्राह्मण का
3. दीर्घायु
4. कर्ण की
5. राजाओं का धन सर्प की जिह्वा के समान चंचल होता है।

उत्तर-2

6. हजारों
7. हजारों को
8. हाथियों के
9. अपर्याप्त
10. सारी पृथ्वी को जीतकर

उत्तर-3

11. शल्य के द्वारा
12. शिक्षा
13. आहुति में और दान में दिया गया
14. विमला
15. इन्द्र के द्वारा
16. अर्जुन

भारविविरचितं किरातार्जुनीयम्

भारतीय संस्कृति में संस्कृत साहित्य का अमूल्य योगदान है। साहित्य शब्द का ही पर्याय काव्य होता है। जगत में काव्य का उद्‌भव कहाँ से हुआ। कदाचित् रामादि के जैसा व्यवहार करें न कि रावणादि जैसा सम्पादन के लिए ही। वहाँ काव्य की महिमा की क्या कथा? काव्य में सभी विषयों का सार है। क्योंकि काव्य में वेदों तथ उपनिषदों का भी वर्णन दिखाई देता है। और वेदान्तादिशास्त्रों के भी बहुत से सिद्धान्त काव्य में दिखाई देते हैं। प्राय: काव्य में सब कुछ ही समाहित है। इसलिए ही बुद्धिमान व्यक्तियों का अधिकांश समय काव्य शास्त्रादि के अध्ययन अध्यापन में व्यतीत होता है ऐसी सुभाषित प्रसिद्ध है।

स्वरूप के अनुसार काव्य दो प्रकार के है- श्रव्य काव्य, दृश्य काव्य। वहाँ प्रबन्ध मुक्तक के भेद से श्रव्य काव्य भी दो प्रकार का है। प्रबन्ध काव्य को दो प्रकार से विभाजित किया गया है- महाकाव्य और खण्ड काव्य। और शैली भेद से काव्य तीन प्रकार का है- पद्य काव्य, गद्य काव्य और चम्पू काव्य।

पाठ-18

कवच कुण्डल का दान

ध्यान दें:

संस्कृत काव्य शास्त्र में काव्य का प्रयोजन चार पुरुषार्थों की प्राप्ति ही है। वहीं आचार्य मम्मट काव्य के छः प्रयोजन कहते हैं।

काव्यं यशसेर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यः परनिर्वृतये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे॥ इति॥

अर्थात् यश की प्राप्ति के लिए, धन लाभ के लिए, सामाजिक व्यवहार की शिक्षा के लिए, अमंगल के नाश के लिए, रसास्वादन के अनुभव के लिए और स्त्री जैसे उपदेश देती है उसके समान उपदेश के लिए काव्य उपयोगी है।

शिव ने किरात वेश को धारण करके अर्जुन के साथ युद्ध किया ऐसा प्रसिद्ध है। महाभारत प्रायः सबको विदित है। महाकवि भारवि ने महाभारत के वन पर्व का एक प्रसंग लेकर किरातार्जुनीयम् एक प्रसिद्ध महाकाव्य को लिखा। कवि भारवि ने महाभारत का अन्धे की भाँति अर्थात ज्यों का त्यों अनुसरण नहीं किया। बल्कि अपनी प्रतिभा से नए रूप से उस कथा को वर्णित किया। किरात और अर्जुन को आधार बनाकर ही कवि ने इस ग्रन्थ को रचा। इस ग्रन्थ में भारतीय संस्कृति, शिष्टाचार, राजनीति, स्त्री के स्वभाव का सम्यक् निदर्शन के अनेक विषयों दृष्टिगोचर होते हैं। किरात अर्जुन का चरित्र ही इस ग्रन्थ में प्रधान है। इसलिए ग्रन्थ का नाम किरातार्जुनीयम् है। प्रसिद्ध पाँचों महाकाव्यों में एक किरातार्जुनीयम् महाकाव्य का होना उसका प्रमाण है। इसीलिए ही भारवेरर्थगौरवम् और नारिकेलफलसम्मितं वचः संसार में प्रसिद्ध है। यह महाकाव्य अट्ठारह सर्गों में विभक्त है।

वहाँ प्रथम सर्ग में द्वैतवन में रहते हुए युधिष्ठिर के समीप में ब्रह्मचारी वेषधारी वनेचर दुर्योधन के शासन कौशल को सुनाता है। और वह सुनकर के द्रोपदी युधिष्ठिर को युद्ध के लिए उत्तेजित करते हुए ओज गुण युक्त वचनों से उपालम्भ करती हैं। इस सर्ग में चौसठ श्लोक है। उनमें से तीस श्लोक परिच्छेद रूप से संगृहीत हैं। इस परिच्छेद में वस्तुतः गुप्तचरों का स्वभाव कैसा होना चाहिए और द्रौपदी के मुख से स्त्री स्वभावों का विशाल चित्रण किया गया है। यहाँ तीस श्लोकों में वंशस्थ छन्द है। और उसका लक्षण **जतौ तु वंशस्थमुदीरितंजरौ है।**